नागरिक विविध

बी आर तुली से पहले जे.

मेजर जगजीत सिंह ढिल्लों,-याचिकाकर्ता।

बनाम:

भारत संघ- और अन्य,-प्रतिवादी।

1969 की सिविल रिट संख्या 1339

14 जनवरी, 1970.

सेना अधिनियम (1950 का XLVI)-धारा 18 और 19-भारत का संविधान (1950)-अनुच्छेद 77-सेना की बर्खास्तगी की शक्तियाँ।धारा 18 और 19 के तहत सेना के अधिकारी-चाहे वे अलग हों-अनुच्छेद 77-क्या केवल धारा 19 के तहत कार्रवाई पर लागू हो-धारा 18 के तहत राष्ट्रपति की शक्ति-क्या प्रत्यायोजित किया जा सकता है।

अभिनिर्धारित, कि, की धारा 18 के अधीन राष्ट्रपति की शक्तियाँ? सेना-अधिनियम, 1950, धारा 19 के तहत केंद्र सरकार की शक्तियों से काफी अलग है। धारा 19 के तहत कार्रवाई केंद्र सरकार द्वारा राष्ट्रपति के नाम पर की जानी है और ऐसे मामलों में ही संविधान का अनुच्छेद 77 लागू होता है। यह अनुच्छेद अधिनियम की धारा 18 के तहत राष्ट्रपति की खुशी पर लागू नहीं होता है। ऐसी शक्ति राष्ट्रपति द्वारा किसी अधीनस्थ अधिकारी को प्रत्यायोजित नहीं की जा सकती है और उसका प्रयोग केवल संविधान द्वारा निर्धारित तरीके से किया जा सकता है। निर्णय राष्ट्रपति को स्वयं लेना होता है न कि केंद्र सरकार के किसी अधिकारी को। केंद्र सरकार के अधिकारी अधिनियम की धारा 19 के तहत कार्य करते हुए नियमों के अनुसार कार्रवाई कर सकते हैं, लेकिन इस मामले में उनका कोई अधिकार क्षेत्र नहीं है, जब राष्ट्रपति द्वारा अधिनियम की धारा 18 के तहत अपनी खुशी से कार्रवाई की जानी है।

भारत के संविधान के अनुच्छेद 226/227 के अधीन याचिका, जिसमें अनुरोध किया गया है कि भारत सरकार के दिनांक 11 अप्रैल, 1969 और 3 मई, 1969 के आक्षेपित नोटिसों को निरस्त करने के लिए एक उपयुक्त रिट, आदेश या निर्देश जारी किया जाए और आगे यह प्रार्थना की जाए कि प्रत्यर्थियों को कानून के अनुसार आगे बढ़ने का निर्देश दिया जाए ताकि याचिकाकर्ता को परेशान न किया जा सके और यह भी प्रार्थना की जाए कि रिट याचिका का निर्णय लंबित रहने तक, आक्षेपित नोटिसों के अनुसरण में आगे की कार्यवाही या याचिकाकर्ता को सेवा से हटाने के मामले में किसी अन्य कार्रवाई पर रोक लगाई जाए।

याचिकाकर्ता की ओर से एच. एस. गुजराल, अधिवक्ता।

डी. एस. तेवतिया, अधिवक्ता-सामान्य, हरियाणा, सी. बी. कौशिक के साथ, और जी. सी. गार्ग, अधिवक्ता, उत्तरदाताओं के लिए।

निर्णय

तुली, जे. -याचिकाकर्ता, मेजर जगजीत सिंह ढिल्लों, 5 नवंबर, 1949 को पूना में भारतीय सेना में अस्थायी कमीशन के लिए एक अधिकारी कैडेट के रूप में शामिल हुए। उन्होंने 24 मई, 1957 को अमृतसर जिले के गाँव जलाल उस्मान के रतन रंधावा से शादी की और शादी के दो दिन बाद वे अपनी पत्नी को गाँव में छोड़कर अपनी ड्यूटी पर वापस चले गए। उसका आरोप है कि उसके बाद वह अपनी पत्नी से नहीं मिला। 17 मई, 1958 को याचिकाकर्ता ने आरोप लगाया कि उसे अपने भाई धरम सिंह से एक तार मिला था जिसमें उसकी पत्नी श्रीमती रतन रंधावा की मृत्यु की सूचना दी गई थी। उस तार के आधार पर याचिकाकर्ता ने संबंधित अधिकारियों को हताहत होने के बारे में सूचित किया और उसकी मृत्यु के तथ्य को भाग ॥ आदेश सं। 348, दिनांक ए 18 जून, 1958 (Officers).
याचिकाकर्ता अपनी पत्नी की मृत्यु की खबर के बावजूद गाँव नहीं गया। दिसंबर, 1959 में, याचिकाकर्ता को जम्मू

और कश्मीर में उनकी इकाई से दक्षिणी कमान, सिग्नल रेजिमेंट, जबलपुर में स्थानांतरित कर दिया गया था। वहाँ तैनात रहते हुए, उन्होंने अपने विभाग के अधिकारियों की अनुमति प्राप्त करने के बाद 31 मार्च, 1960 को श्रीमती सुरजीत कौर से लुधियाना में शादी की।

(2) गाँव के निवासी रतन कौर और डाकघर उस्मान ने जनवरी में एक आवेदन भेजा। 24, 1961, कमांडर-इन-चीफ (जनरल थिमाया) सेना मुख्यालय, नई दिल्ली को यह कहते हुए कि उनकी शादी 24 मई, 1987 को याचिकाकर्ता से हुई थी, और उनके जीवनकाल के दौरान याचिकाकर्ता ने सुरजीत कौर से शादी की थी, जो लुधियाना से संबंधित थी, जहां वह गवर्नमेंट कॉलेज फॉर वुमन में अंग्रेजी की प्रोफेसर के रूप में काम कर रही थी। इस प्रकार उसने शिकायत की कि याचिकाकर्ता ने उसका जीवन बर्बाद कर दिया है और मामले की जांच का अनुरोध किया। याचिकाकर्ता को श्रीमती रतन कौर की शिकायत की एक प्रति भेजी गई और अपना स्पष्टीकरण प्रस्तुत करने के लिए कहा गया जो उन्होंने 13 फरवरी, 1961 को किया। इसके बाद उन्होंने उक्त रतन कौर के खिलाफ मजिस्ट्रेट प्रथम श्रेणी, जबलपुर की अदालत में भारतीय दंड संहिता की धारा 500 के तहत शिकायत दर्ज कराई, जिसमें 21 अगस्त, 1961 को एक समझौता किया गया था। समझौता एक विलेख के रूप में दर्ज किया गया था जिसमें रतन कौर ने स्वीकार किया था कि उसने याचिकाकर्ता के खिलाफ झूठे और दुर्भावनापूर्ण मौखिक और लिखित आरोप लगाए थे, जिसमें आरोप लगाया गया था कि उसकी शादी 24 मई, 1957 को गाँव जलाल उस्मान, तहसील और जिला अमृतसर में हुई थी, और वह छलपूर्वक द्वारा छोड़ दिया गया था the.e याचिकाकर्ता। समझौते के इस विलेख के आधार पर श्रीमती रतन कौर को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 345 (6) के तहत बरी कर दिया गया क्योंकि याचिकाकर्ता अपनी शिकायत को आगे नहीं बढ़ाना चाहता था। उन्होंने 31 अगस्त, 1961 को एक और हलफनामा दिया, जिसे श्री बृजमोहन लाई, शपथ आयुक्त, बटाला द्वारा सत्यापित किया गया था, जिसमें उन्होंने कहा था कि उन्होंने कभी शादी नहीं की थी या याचिकाकर्ता के साथ उनका कोई संबंध नहीं था और याचिकाकर्ता के खिलाफ सैन्य अधिकारियों को प्रस्तुत आवेदन में उनके द्वारा लगाए गए आरोप झूठे और मनगढ़ंत थे और उन्होंने याचिकाकर्ता के कुछ दुश्मनों के उकसावे पर ये आरोप लगाए थे। समझौता विलेख और शपथ पत्र की प्रतियां सैन्य अधिकारियों को भेजी गईं, लेकिन 23 मई, 1951 को, ऑफिसर कमांडिंग, पूना ने जिला मजिस्ट्रेट, अमृतसर से श्रीमती रतन कौर द्वारा लगाए गए आरोपों की जांच करने का अनुरोध किया। जिला मजिस्ट्रेट ने नायब तहसीलदार को श्रीमती रतन कौर द्वारा लगाए गए आरोपों की आवश्यक जांच करने का निर्देश दिया। नायब तहसीलदार ने अपनी रिपोर्ट जिला मजिस्ट्रेट को सौंपते हुए कहा कि श्रीमती रतन कौर द्वारा बनाए गए दावे सही थे और उस रिपोर्ट के आधार पर जिला मजिस्ट्रेट, अमृतसर ने अपनी रिपोर्ट सेना के अधिकारियों को इस आशय से भेज दी कि उक्त रतन कौर याचिकाकर्ता की पत्नी थी और याचिकाकर्ता श्रीमती सुरजीत कौर के साथ विवाह करके बहुविवाह का दोषी प्रतीत होता है। इसी तरह की एक रिपोर्ट पंजाब सरकार द्वारा सैन्य अधिकारियों को भेजी गई थी, लेकिन बदले में यह स्वीकार किया जाता है कि नायब तहसीलदार द्वारा की गई पूछताछ याचिकाकर्ता के पीछे थी, जिसे न तो सूचित किया गया था और न ही संबद्ध किया गया था। जिला मजिस्ट्रेट ने न तो स्वतंत्र रूप से कोई जांच की और न ही पंजाब सरकार ने। इस प्रकार याचिकाकर्ता के बहुविवाह के बारे में रिपोर्ट प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का पालन किए बिना बनाई गई थी। हालाँकि, यह संदेह करते हुए कि श्रीमती रतन कौर को शपथ पर बयान देने के लिए मजबूर किया गया था कि वह याचिकाकर्ता से विवाहित नहीं थी और उसने याचिकाकर्ता के कुछ दुश्मनों के कहने पर झूठे आरोप लगाए थे, सेना के अधिकारियों ने 7 नवंबर, 1963 को याचिकाकर्ता को सेना नियम 14 के तहत कारण बताओ नोटिस जारी किया, इस आरोप पर कि उसने श्रीमती रतन कौर के जीवनकाल के दौरान श्रीमती सुरजीत कौर से शादी की थी और उसने झूठा आरोप लगाया था कि श्रीमती रतन कौर की मई, 1958 में मृत्यु हो गई थी। यह नोटिस सेना प्रमुख के आदेश के अनुसरण में जारी किया गया था क्योंकि नोटिस में इसका उल्लेख किया गया था "उपरोक्त मामले को सेना प्रमुख के समक्ष रखा गया था, जो मानते हैं कि सेवा में आपका और प्रतिधारण वांछनीय नहीं है और मुझे आपकी सेवाओं की समाप्ति के लिए सेना नियम 14 के तहत प्रशासनिक कार्रवाई शुरू करने का निर्देश दिया है।" याचिकाकर्ता ने सिविल रिट नं. 1964 का 279, इस न्यायालय में, दिनांक 7 नवंबर, 1963 की कारण बताओ सूचना को चुनौती देते हुए। मुख्य तर्क यह था कि भारतीय सेना नियमों का नियम 14 सेना अधिनियम के अधिकार क्षेत्र से बाहर था और इसलिए, उस नियम के तहत जारी किया गया नोटिस कानून में गलत था। इस न्यायालय की एक खंड पीठ, महाजन और न्यायमूर्ति नरूला ने कैप्टन

अमरिंदर सिंह मामले में दिल्ली उच्च न्यायालय की एक खंड पीठ के फैसले से सहमति जताते हुए भारतीय सेना के नियम 14 को अधिकार से बाहर करार दिया। एस. के. राव बनाम इंद्र संघ (1). मामले के उस दृष्टिकोण पर याचिका को स्वीकार कर लिया गया और 24 मार्च, 1967 के आदेश द्वारा कारण बताओ नोटिस को रद्द कर दिया गया। यह कहा जा सकता है कि कारण बताओ नोटिस, दिनांक 7 नवंबर, 1963 को भारत संघ द्वारा वापस ले लिया गया था और एक अन्य नोटिस, दिनांक एनरिल 9,1964 को C.W के निर्णय से पहले जारी किया गया था। 1964 का 279. डिवीजन बेंच के उस फैसले के खिलाफ भारत संघ ने सुप्रीम कोर्ट का रुख किया है और उस अपील में आप नहीं हैं

(3) 11 अप्रैल, 1969 को भारत सरकार के उप सचिव। राष्ट्रपति की ओर से और उसकी ओर से 7 नवंबर, 1963 और 9 अप्रैल, 1964 के कारण बताओ नोटिस में लगाए गए आरोपों पर याचिकाकर्ता को कारण बताओ नोटिस जारी करने का निर्देश दिया गया, जिसमें उनसे कारण बताने के लिए कहा गया कि सेना अधिनियम की धारा 18 के तहत उनकी सेवाओं को क्यों समाप्त नहीं किया जाना चाहिए। 3 मई, 1969 को कार्यवाहक अधिकारी कमांडिंग द्वारा याचिकाकर्ता को कारण बताओ नोटिस दिया गया था। इस नोटिस के लिए याचिकाकर्ता ने 3 मई, 1969 को एक अंतरिम स्पष्टीकरण प्रस्तुत किया और उसके बाद 3 मई, 1969 को उन्हें कारण बताओ नोटिस के मुद्दे को चुनौती देते हुए इस न्यायालय में वर्तमान रिट याचिका दायर की, जिसे 14 जुलाई, 1969 को स्वीकार किया गया था। और दो महीने के भीतर सुनवाई करने का निर्देश दिया गया। याचिका पर वापसी कैप्टन द्वारा दायर की गई है। जसबिर सिंह, स्टाफ कैप्टन डा. स्टेशन मुख्यालय, चंडीगढ़।

(4) याचिकाकर्ता के विद्वान वकील ने बताया है कि सेना अधिनियम की धारा 18 के तहत राष्ट्रपति अपने व्यक्तिगत निर्णय में याचिकाकर्ता की सेवाओं को समाप्त करने या ऐसा आदेश देने से पहले कारण बताओ नोटिस जारी करने का आदेश पारित कर सकते हैं। सरकार का कोई भी अधिकारी इस तरह का आदेश या कारण बताओ नोटिस जारी नहीं कर सकता है। याचिकाकर्ता ने अपनी याचिका के पैराग्राफ 21 के उप-पैराग्राफ (iv) और (v) में आरोप लगाया हैः-(iv) "कि केंद्र सरकार के पास याचिकाकर्ता को सेवा से हटाने के लिए भारतीय सेना अधिनियम की धारा 18 के तहत निहित कोई शक्तियां नहीं हैं। उक्त धारा केवल राष्ट्रपति की खुशी से संबंधित है जो अधिनियम की धारा 19 के तहत दी गई केंद्र सरकार की शक्तियों से अलग उसका अपना व्यक्तिगत विशेषाधिकार है।

(v) "कि न तो यह आरोप लगाया गया है या दिखाया गया है कि याचिकाकर्ता के मामले पर कभी भी राष्ट्रपति द्वारा अपने व्यक्तिगत विवेक से विचार किया गया था और उन्होंने प्रतिवादी नं। 2 उसकी ओर से कोई कार्रवाई करना या कोई नोटिस जारी करना। इसके अलावा अधिनियम की धारा 18 के तहत राष्ट्रपति के उक्त अधिकार क्षेत्र को किसी अन्य व्यक्ति को नहीं सौंपा जा सकता है।

जवाब में विवरण में कहा गया है (iv) और (v) "अधिकारी को दिया गया कारण बताओ नोटिस केंद्र सरकार द्वारा या उसकी ओर से नहीं बल्कि राष्ट्रपति के लिए और उसकी ओर से है। संविधान का अनुच्छेद 77 राष्ट्रपति को अपने कार्यों के प्रयोग के लिए नियम बनाने में सक्षम बनाता है और एक उप सचिव को राष्ट्रपति के लिए और उनकी ओर से हस्ताक्षर करने के लिए भुगतान किए गए नियमों द्वारा अधिकृत किया जाता है।

इस कथन से यह बिल्कुल स्पष्ट है कि यह स्वीकार किया जाता है कि कागजात कभी भी राष्ट्रपति को इस मामले में अपने व्यक्तिगत निर्णय का प्रयोग करने में सक्षम बनाने के लिए नहीं भेजे गए थे और न ही उन्होंने कारण बताओ नोटिस जारी करने का निर्देश दिया था। सेना अधिनियम, 1950 की धारा 18 और 19 इस प्रकार हैंः -

"18. अधिनियम के तहत सेवा की अवधि-इस अधिनियम के अधीन प्रत्येक व्यक्ति राष्ट्रपति की खुशी के दौरान पद धारण करेगा।

"19. केंद्र सरकार द्वारा सेवा समाप्ति-इस अधिनियम के प्रावधानों और उसके तहत बनाए गए नियमों और विनियमों के अधीन, केंद्र सरकार इस अधिनियम के अधीन किसी भी व्यक्ति को बर्खास्त या सेवा से हटा सकती है।

इन दो धाराओं के अवलोकन से यह बिल्कुल स्पष्ट है कि धारा 18 के तहत शक्तियां धारा 19 के तहत केंद्र सरकार की शक्तियों से काफी अलग हैं। धारा 19 के तहत कार्रवाई केंद्र सरकार द्वारा राष्ट्रपति के नाम पर की जानी है और ऐसे मामलों में ही संविधान का अनुच्छेद 77 लागू होता है। संविधान का अनुच्छेद 77 सेना अधिनियम की धारा 18 के तहत राष्ट्रपति की खुशी पर लागू नहीं होता है। उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य बनाम बाबू राम उपाध्याय में उच्चतम न्यायालय के उनके अधिपतियों द्वारा यह अभिनिर्धारित किया गया है कि किसी लोक सेवक को खुशी से बर्खास्त करने की राज्यपाल की शक्ति संविधान के अनुच्छेद 154 के दायरे से बाहर है और इसलिए राज्यपाल द्वारा किसी अधीनस्थ अधिकारी को प्रत्यायोजित नहीं किया जा सकता है, और उसके द्वारा इसका प्रयोग केवल संविधान द्वारा निर्धारित तरीके से किया जा सकता है। इसी तर्क पर यह अभिनिर्धारित किया जाना चाहिए कि किसी लोक सेवक को खुशी से बर्खास्त करने की निवासी की शक्ति संविधान के अनुच्छेद 77 के दायरे से बाहर है और इसलिए, राष्ट्रपति द्वारा किसी अधीनस्थ अधिकारी को प्रत्यायोजित नहीं किया जा सकता है और उसका प्रयोग केवल संविधान द्वारा निर्धारित तरीके से किया जा सकता है। संविधान में कहीं भी यह प्रावधान नहीं है कि किसी लोक सेवक को खुशी से बर्खास्त करने की राष्ट्रपति की शक्ति का प्रयोग उसके नाम या उसकी ओर से कोई भी अधिकारी कर सकता है। निर्णय राष्ट्रपति को स्वयं लेना होता है न कि केंद्र सरकार के किसी अधिकारी को। केंद्र सरकार के अधिकारी सेना अधिनियम की धारा 19 के तहत कार्य करते हुए नियमों के अनुसार कार्रवाई कर सकते हैं और इस मामले में उनका कोई अधिकार क्षेत्र नहीं है जब राष्ट्रपति द्वारा उक्त अधिनियम की धारा 18 के तहत अपनी खुशी से कार्रवाई की जानी है।

(5) श्री एस. डी. तेवतिया, हरियाणा राज्य के विद्वान महाधिवक्ता, जो प्रत्यर्थियों की ओर से उपस्थित होते हैं, ने तर्क दिया है कि भारत सरकार के उप सचिव को भारत के राष्ट्रपति की ओर से नोटिस जारी करने की शक्ति है और इस उद्देश्य के लिए वह मोती राम बनाम महाप्रबंधक, उत्तर पूर्व सीमांत रेलवे में सर्वोच्च न्यायालय के उनके लॉर्डशिप के फैसले पर निर्भर करता है, जहां यह रिपोर्ट के पैराग्राफ 13 में देखा गया था-"राष्ट्रपति या राज्यपाल की खुशी का उपयोग इस प्रकार ऐसे व्यक्ति द्वारा किया जा सकता है जिसे राष्ट्रपति या राज्यपाल क्रमशः उस ओर से निर्देशित कर सकते हैं, और इस प्रकार प्रयोग की गई खुशी का उपयोग उस ओर से बनाए गए नियमों के अनुसार किया जाना चाहिए। ये नियम, और वास्तव में, प्रतिनिधि को प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग अनुच्छेद 210 के अधीन होना चाहिए और इसलिए, अनुच्छेद 309 राष्ट्रपति या उसमें निर्दिष्ट राज्यपाल की खुशी को प्रभावित या प्रभावित नहीं कर सकता है। अतः इसमें कोई संदेह नहीं है कि अनुच्छेद 309 को अनुच्छेद 310 और 311 के अधीन पढ़ा जाना चाहिए। रिपोर्ट के पैराग्राफ (57) में उनके लॉर्डशिप्स ने उत्तर प्रदेश राज्य बनाम बाबू राम उपाध्याय में अपने फैसले का उल्लेख किया और कहा-"हमें यह इंगित करना चाहिए कि विद्वान न्यायाधीश ने उन टिप्पणियों के प्रभाव का गलत अर्थ निकाला है जिन पर वह भरोसा करते हैं। उक्त निर्णय में यह अभिनिर्धारित किया गया है कि जहां अनुच्छेद 310 राष्ट्रपति या राज्यपाल की प्रसन्नता पर कार्यकाल का उपबंध करता है, वहीं अनुच्छेद 309, यथास्थिति, विधायिका या कार्यपालिका को, अन्य बातों के साथ-साथ, अनुच्छेद 310 के तहत मान्यता प्राप्त अधिस्थापक शक्ति पर प्रभाव डाले बिना, सेवा की शर्तों के संबंध में कोई कानून या नियम बनाने में सक्षम बनाता है। दूसरे शब्दों में, अनुच्छेद 309 द्वारा प्रदत्त शक्ति का प्रयोग करते हुए, अनुच्छेद 310 द्वारा मान्यता प्राप्त सुख की सीमा को प्रभावित या बाधित नहीं किया जा सकता है। वास्तव में, प्रस्तावों के रूप में निष्कर्ष बताते हुए, उक्त निर्णय में कहा गया है कि संसद या विधानमंडल अनुच्छेद 311 के साथ पठित अनुच्छेद 310 के तहत राष्ट्रपति या राज्यपाल की शक्तियों को प्रभावित किए बिना सेवा की शर्तों को विनियमित करने वाला कानून बना सकता है। उसी स्थान पर यह भी कहा गया है कि एक लोक सेवक को खुशी से बर्खास्त करने की शक्ति अनुच्छेद 154 के दायरे से बाहर है और इसलिए, राज्यपाल द्वारा एक अधीनस्थ अधिकारी को प्रत्यायोजित नहीं किया जा सकता है और उसके द्वारा इसका प्रयोग केवल संविधान द्वारा निर्धारित तरीके से किया जा सकता है। इस संदर्भ में, यह स्पष्ट होगा कि इस बाद के अवलोकन का उद्देश्य यह निर्धारित करना नहीं है कि अनुच्छेद 309 के तहत कोई कानून नहीं बनाया जा सकता है या उक्त अनुच्छेद के परन्तुक के तहत एक नियम नहीं बनाया जा सकता है, जिसके द्वारा प्रक्रिया निर्धारित की जा सकती है, और प्राधिकरण जिसके द्वारा उक्त आनंद का प्रयोग किया जा सकता है। उनके प्रभुओं की ये टिप्पणियां विद्वान वकील के तर्क में मदद नहीं करती हैं क्योंकि यह दलील नहीं दी गई है कि संविधान के अनुच्छेद 310 या सेना अधिनियम की धारा 18 के तहत राष्ट्रपति द्वारा आनंद के प्रयोग के लिए प्रक्रिया प्रदान

करने वाले विधान द्वारा कोई नियम तैयार किए गए हैं। मेरे संज्ञान में कोई नियम नहीं लाया गया है जिसके तहत सेना अधिनियम की धारा 18 के तहत राष्ट्रपति की ओर से कारण बताओ नोटिस जारी करने की शक्ति किसी भी अधीनस्थ अधिकारी को सौंप दी गई है। ऐसे किसी भी नियम के अभाव में यह अभिनिर्धारित किया जाना चाहिए कि सेना अधिनियम की धारा 18 के अधीन शक्ति का प्रयोग राष्ट्रपति द्वारा स्वयं किया जाना है न कि उसके अधीनस्थ किसी अधिकारी द्वारा।

(6) ऊपर दिए गए कारणों के लिए, मेरा मानना है कि भारत सरकार के उप सचिव के निर्देश के अनुसरण में 3 मई, 1969 को याचिकाकर्ता को जारी कारण बताओ नोटिस; दिनांक 11 अप्रैल, 1969, अधिकार क्षेत्र से बाहर है और इसे रद्द किया जाना चाहिए।

(7) तदनुसार, यह रिट याचिका खर्च के साथ स्वीकार की जाती है और 3 मई, 1969 का आक्षेपित कारण बताओ नोटिस और 11 अप्रैल, 1969 के भारत सरकार के उप सचिव के निर्देश को रद्द कर दिया जाता है। वकील का शुल्क रु 100 है।

अस्वीकरण : स्थानीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के सीमित उपयोग के लिए है ताकि वह अपनी भाषा में इसे समझ सके और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है । सभी व्यवहारिक और आधिकारिक उद्देश्यो के लिए निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रमाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य के लिए उपयुक्त रहेगा ।

आकांक्षा सैनी

प्रशिक्षु न्यायिक पदाधिकारी

सोनीपत(हरियाणा)